दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

<u>निर्णय की तिथिः 24.01.2023</u>

+रि.या.(आप) 209/2023, आप.वि.आ. 1951/2023

रविंदर लाल एरी ....याचिकाकर्ता

द्वारा : श्री ध्रुव द्विवेदी, अधिवक्ता।

बनाम

एस.शालू कंस्ट्रक्शन प्रा.ली. एवं अन्य ...प्रत्यर्थीगण

द्वारा : श्री राहुल त्यागी, राज्य के लिए अति.स्था.अधि., के साथ श्री जतिन, श्री आशीष चोजर, अधिवक्तागण के साथ उप.नि. मुरारी कृष्ण, थाना एन.एफ.सी

कोरम :
माननीय न्यायमूर्ति श्री जसमीत सिंह
<u>न्या.जसमीत सिंह (मौखिक)</u>

<u>आप.वि.आ. 1952/2023 और आप.वि.आ. 1953/2023</u>

1. सभी न्यायसंगत अपवादों के अधीन अनुमति दी गई।

2. आवेदन का निपटान कर दिया गया है।

3. यह याचिका आप.पुन. 23/2020 में विद्वान सत्र न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 19.11.2022 के आक्षेपित निर्णय को अपास्त करने और विद्वान अतिरिक्त मुख्य महानगर दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 06.01.2020 के आदेश को बहाल करने के लिए दायर की गई है|

4. वर्तमान मामले में, विद्वान अतिरिक्त मुख्य महानगर दंडाधिकारी ने दिनांक 06.01.2020 के आदेश द्वारा, याचिकाकर्ता द्वारा दं.प्र.सं. धारा 156 (3) के तहत दायर आवेदन पर, "कार्रवाई की गई रिपोर्ट" ("कार्रवाई की गई रिपोर्ट") पर ध्यान नहीं दिया और प्राथमिकी दायर करने के निर्देश दिए ।

5. उक्त आदेश को प्रत्यर्थीगण द्वारा अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका में चुनौती दी गई थी, जिन्होंने पहले कानून स्थिति पर चर्चा की और अभिनिर्धारित किया कि पुनरीक्षण याचिका पोषणीय है।

6. दूसरे, विद्वान सत्र न्यायालय का विचार था कि एक बार कार्रवाई की गई रिपोर्ट में यह राय दी गई है कि कोई संज्ञेय अपराध नहीं किया गया है और मामला सिविल प्रकृति का है, विद्वान अतिरिक्त मुख्य महानगर दंडाधिकारी को जाँच अधिकारी की राय से असहमत होने के लिए और प्राथमिकी दर्ज करने के आदेश के लिए कारणों की आवश्यकता होगी।

7. सत्र न्यायालय का विचार था कि दिनांक 06.01.2020 का आदेश कारणों से रहित था और इसलिए सत्र न्यायालय ने दिनांक 06.01.2020 के आदेश को सहर्ष अपास्त कर दिया और मामले को नए सिरे से सुनने और तर्कपूर्ण निर्णय लेने के लिए विद्वान अतिरिक्त मुख्य महानगर दंडाधिकारी को भेज दिया।

8. सत्र न्यायालय के इस आदेश को याचिकाकर्ता ने चुनौती दी है।

9. विद्वान अधिवक्ता श्री द्विवेदी द्वारा यह कहा गया है कि प्राथमिकी दायर करने के निर्देश देने वाला आदेश एक अंतर्वर्ती आदेश है और गुजरात उच्च न्यायालय में विशेष आपराधिक याचिक स. 5789/2016 में "परमार रमेशचंद्र गणपतराय एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य" में निर्णय पर और अधिक विशेष रूप से पैरा 45 और 50 पर भरोसा किया है जो निम्नानुसार पढ़े:

> *"45. यह विवादास्पद प्रश्न है कि क्या पुलिस द्वारा केवल प्राथमिकी दर्ज होने के खिलाफ एक पुनरीक्षण आवेदन पोषणीय नहीं है। कि क्या ऐसा पुनरीक्षण पोषणीय माना जाएगा जब दंडाधिकारी केवल प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश देता है। इस न्यायालय की राय में, उत्तर एक जोरदार नहीं है। संहिता की धारा 401 के साथ पठित धारा 397 के तहत न्यायालय द्वारा प्रदत्त पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग उस अवसर पर होगा जब सक्षम न्यायालय द्वारा कोई आदेश पारित किया जाता है, जो अंतर्वर्ती प्रकृति का नहीं है, तथापि, उक्त शक्ति का प्रयोग*

प्राथमिकी या जाँच को अभिखंडित करने के लिए नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसी शक्ति का प्रयोग संहिता की धारा 482 के अधीन या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन केवल उच्च न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। यदि दंडाधिकारी द्वारा धारा 156 (3) के तहत पारित आदेश के खिलाफ सत्र न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन पोषणीय माना जाता है| और यदि इस तरह के पुनरीक्षण की अनुमति दी जाती है, तो इसका प्रभाव प्राथमिकी को रद्द करने का होगा, इसलिए, यदि सत्र न्यायालय के पास अन्यथा ऐसी कोई शक्ति नहीं है, तो वह संहिता की धारा 156 (3) के तहत दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण पर विचार करके ऐसा नहीं कर सकता है। [देखें अमर नाथ बनाम हरियाणा राज्य (ऊपर)]

.....

50. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, मेरा मानना है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 156 (3) के तहत आदेश एक "अंतर्वर्ती आदेश" है और दं.प्र.सं. की धारा 401 के साथ पठित धारा 397 के तहत नहीं आता है उसी समय, पुलिस द्वारा मामला दर्ज करने और जाँच के लिए संहिता की धारा 156 (3) के तहत आवेदन को खारिज करने वाला दंडाधिकारी का आदेश "अंतर्वर्ती आदेश" नहीं है। ऐसा आदेश दं.प्र.सं. की धारा 397 के साथ पठित धारा 401 के तहत आपराधिक पुनरीक्षण के उपचार के लिए उत्तरदायी है।"

10. उन्होंने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय यानी आप.पुन स. 1581/2001,1640/2001,1656/2001,1658/2001,1727/2001,1731/2001

" में, *फादर थॉमस बनाम उ.प्र. राज्य एवं अन्य"* पर भी भरोसा किया और अधिक विशेष रूप से पैरा 46 और 54 जो निम्नानुसार पढ़े:

> *"46. चूंकि दंडाधिकारी द्वारा धारा 156 (3) के तहत पारित जाँच का निदेश विशुद्ध रूप से अंतर्वर्ती प्रकृति का है और उसमें पक्षकारों के कोई पर्याप्त अधिकार समिलित नहीं हैं, हमारा यह मत है आपराधिक पुनरीक्षण पर विचार के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 (2) के तहत रुकावट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत आवेदन प्रस्तुत करके भी दरकिनार नहीं किया जा सकता है। जैसा कि राज्य बनाम नवजोत संधू, एम.ए.एन.यू/एस.सी/0396/2003: (2003) 6 एस. सी. सी. 641, में पैरा 29 में कहा गया हैः*
>
> *...../*
>
> *54. जैसा कि पूर्वोक्त तर्क के आधार पर हमने पहले ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के तहत आदेश को आपराधिक पुनरीक्षण या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत आवेदन में चुनौती देने के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया है। यह इस न्यायालय के लिए आवश्यक नहीं है कि आगे सवाल करे कि क्या उक्त आदेश प्रशासनिक प्रकृति का है जैसा कि श्री. जी.एस चतुर्वेदी और विद्वान सरकारी अधिवक्ता द्वारा आग्रह किया गया है। या न्यायिक प्रकृति का, जैसा कि श्री डी. एस. मिश्रा और श्री दिलीप गुप्ता द्वारा तर्क दिया गया है।। असित भट्टाचार्य बनाम हनुमान प्रसाद ओझा और अन्य, एम.ए.एन.यू/एस.सी/7676/2007: (2007) 5 एस. सी. सी. 786 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अवलोकन किया, हम भी इस मुद्दे पर कोई राय व्यक्त करने के लिए इच्छुक नहीं हैं, और प्रश्न को बाद की कार्यवाही में निर्णय के लिए खुला छोड़ देते हैं जहां इस प्रश्न का उत्तर आवश्यक हो सकता है।"*

11. मैं दो निर्णयों से सहमत नहीं हो पा रहा हूं ।

12. दिल्ली उच्च न्यायालय ने रि.या. (आप.) 1253/2016 में दिनांक 10.01.2017 को "निशु वाधवा बनाम सिद्धार्थ वाधवा और अन्य" में निम्न टिप्पणियाँ की थी|

> *"13. मुद्दा यह है कि चूंकि आरोपी को आरोपी के रूप में तलब नहीं किया गया है और उसे पुनरीक्षण याचिका दायर करने का कोई अधिकार नहीं है, इसलिए दं.प्र.सं. की धारा 156 (3) के तहत एक आवेदन पर निर्णय लेते समय यह अलग है। उक्त मुद्दा तब सामने आता है जब दंडाधिकारी शिकायत पर विचार करता है और संज्ञान लेने पर शिकायत मामले के रूप में आगे बढ़ता है। यदि तुरंत प्राथमिकी दर्ज करने के निर्देश जारी किए जाते हैं, तो प्राथमिकी दर्ज होने पर, जिस व्यक्ति के खिलाफ प्राथमिकी में आरोप लगाए गए हैं, वह आरोपी का दर्जा प्राप्त कर लेता है। यहाँ तक पुलिस उसे जाँच के लिए समन कर सकती है, संज्ञेय अपराध के आरोपों के लिए वारंट के बिना उसे गिरफ्तार करने के उसके अधिकार विधिवत प्रभावित होते हैं। ऐसी स्थिति में जहाँ किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता और स्वाधीनता का मौलिक अधिकार प्रभावित होता है, यह नहीं माना जा सकता है कि उसे उस स्तर पर सुनवाई का कोई अधिकार नहीं है। इस प्रकार यह मानने के लिए कि चूंकि केवल दं.प्र.सं. की धारा 156 (3) के तहत निर्देश जारी किए गए हैं और कोई संज्ञान नहीं लिया गया है इस प्रकार कोई पुनरीक्षण नहीं होगा, यह सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का गलत पठन होगा। इसलिए, आदेश*

दं.प्र.सं. की धारा 156 (3) के तहत एक आवेदन को खारिज या अनुमति देना अंतर्वर्ती आदेश नहीं है और उसी के खिलाफ एक पुनरीक्षण याचिका पोषणीय है।"

13. मेरा विचार है कि प्राथमिकी दर्ज आरोपी व्यक्ति के मौलिक अधिकार और स्वतंत्रता को प्रभावित होता है। उसे जाँच के लिए तलब किया जा सकता है, संज्ञेय अपराध के आरोपों के लिए वारंट के बिना गिरफ्तार किया जा सकता है। इसलिए, दं.प्र.सं. की धारा 156 (3) के तहत प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश देने वाला एक आदेश एक अंतर्वर्ती आदेश नहीं है और उसी के खिलाफ पुनरीक्षण याचिका पोषणीय होगी क्योंकि अभियुक्त को सुने जाने का मूल्यवान अधिकार है।

14. श्री द्विवेदी द्वारा आगे कहा गया है कि प्राथमिकी के दर्ज होने के लिए केवल संक्षिप्त कारणों की आवश्यकता होती है जो विद्वान महानगर दंडाधिकारी द्वारा दी गई है।

15. दिनांक 06.01.2020 के आदेश का कार्यशील भाग इस प्रकार हैः

"इसके विपरीत, कार्रवाई की गई रिपोर्ट के अनुसार, इस बात से इनकार किया जाता है कि कोई भी संज्ञेय अपराध किया गया है। यह कहा गया है कि सहयोग समझौते को कथित रूप में गढ़ा नहीं गया है। और 85,00,000/- रुपये का पूर्ण और अंतिम भुगतान दिनांक 06.01.2013 की रसीद और एक बिना दिनांकित रसीद द्वारा स्वीकार किया गया है।

शिकायतकर्ता ने बिना दिनांकित रसीद और सहयोग समझौते के मनगढ़ंत पृष्ठों पर अपने हस्ताक्षर से इनकार कर दिया है। जाँच अधिकारी द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि बिना दिनांकित रसीद के अनुसार शिकायतकर्ता के खाते में चेक से 40. 00 लाख रुपये के हस्तांतरण का सत्यापन सत्यापित नहीं हुआ था।

इन तथ्यों और परिस्थितियों में, यह न्यायालय संबंधित धाराओं के तहत प्राथमिकी दर्ज होने का आदेश देना उचित समझता है क्योंकि संज्ञेय अपराध का अपराध बनता है और शिकायतकर्ता स्वयं साक्ष्य एकत्र करने के लिए सुसज्जित नहीं है। संबंधित एस.एच.ओ को एक सप्ताह के भीतर इसे दर्ज करने और अनुपालन रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है। वह कानून के अनुसार मामले की जाँच करेगा /जाँच करवाएगा।"

16. "हरपाल सिंह अरोड़ा और अन्य बनाम राज्य और अन्य "2008 (103) डी.आर.जे 282 में इस न्यायालय ने सुसंगत प्रश्न तैयार किया जो निम्नानुसार हैः

"(ख) जब किसी शिकायतकर्ता द्वारा दं.प्र.सं. की धारा 200 के साथ पढ़ी गई धारा 190 के तहत शिकायत के साथ दं.प्र.सं. की धारा 156 (3) के तहत पुलिस द्वारा जाँच के लिए निर्देश मांगने वाले आवेदन के साथ संपर्क करता है, उसके बाद क्या दंडाधिकारी धारा 156 (3) दं.प्र.सं. के तहत आवेदन का निपटान करने और दं.प्र.सं. की धारा 200 के तहत शिकायत पर कार्यवाही करने से पहले उक्त रिपोर्ट पर कार्य करने के लिए बाध्य है?

.....

16. इस तथ्य पर विचार करते हुए कि विद्वान महानगर दंडाधिकारी ने सी.ए.डब्ल्यू सेल की रिपोर्ट मांगी, जो काफी विस्तृत है, धारा 156 (3) के तहत जाँच का आदेश देने से पहले कार्रवाई का उचित तरीका जाँच के लिए निर्देश जारी करने का निर्णय लेने से पहले उस रिपोर्ट की जाँच करना होता। जब सी.ए.डब्ल्यू सेल में पुलिस इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि कोई संज्ञेय अपराध नहीं किया गया है, तो दंडाधिकारी उस निष्कर्ष को हल्के में नहीं ले सकता है। परन्तु सी.ए.डब्ल्यू सेल का उक्त निष्कर्ष उस स्तर पर दंडाधिकारी पर बाध्यकारी नहीं है, क्योंकि उसका आदेश एक न्यायिक है, इसलिए उसे कारण देना चाहिए, चाहे वह संक्षिप्त क्यों न हो, वह उक्त रिपोर्ट के बावजूद जाँच का आदेश देने के लिए इच्छुक क्यों है। प्रश्न (ख) का उत्तर तदनुसार दिया जाता है।"

17. "अरविंदभाई रवजीभाई पटेल बनाम धीरूभाई सम्भुभाई" 1998 (1) अपराध 351, में गुजरात उच्च न्यायालय ने संहिता की धारा 156 (3) के तहत मामलों की जाँच करने के लिए पुलिस को कहने की बढ़ती प्रवृत्ति पर आपत्ति जताई और दंडाधिकारी को यांत्रिक रूप से आदेश पारित नहीं करने की सलाह दी। यह माना गया थाः-

"दंडाधिकारियों को संहिता की धारा 156 (3) के तहत केवल उन मामलों में कार्य करना चाहिए जहाँ पुलिस की सहायता अनिवार्य रूप से आवश्यक है और दंडाधिकारी का यह विचार है कि शिकायतकर्ता अपने दम पर आरोप के समर्थन में सबूत एकत्र करने और पेश करने की स्थिति में नहीं हो सकता है।"

18. मेरा विचार है कि विद्वान महानगर दंडाधिकारी द्वारा कार्रवाई की गई रिपोर्ट पर विचार नहीं किया गया है।

19. महानगर दंडाधिकारी ने निर्देश दिया कि "इन तथ्यों और परिस्थितियों में यह न्यायालय प्राथमिकी दर्ज करने का आदेश देना उचित समझता है..." यह आदेश विवेक का अनुप्रयोग नहीं दर्शाता है कि कार्रवाई की गई रिपोर्ट पर क्यों और कैसे विचार किया गया है और इस बात के कारण कि विद्वान महानगर दंडाधिकारी जाँच अधिकारी द्वारा व्यक्त की गई राय से सहमत क्यों नहीं है कि कोई संज्ञेय अपराध नहीं किया गया है। विद्वान सत्र न्यायालय द्वारा अपनी पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र में इस पहलू का सही विश्लेषण किया गया है।

20. मामले के इस दृष्टिकोण में, मुझे याचिका में कोई योग्यता नहीं मिलती है और इसे खारिज कर दिया जाता है।

जसमीत सिंह, न्या.

जनवरी 24, 2023/डी एम

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*